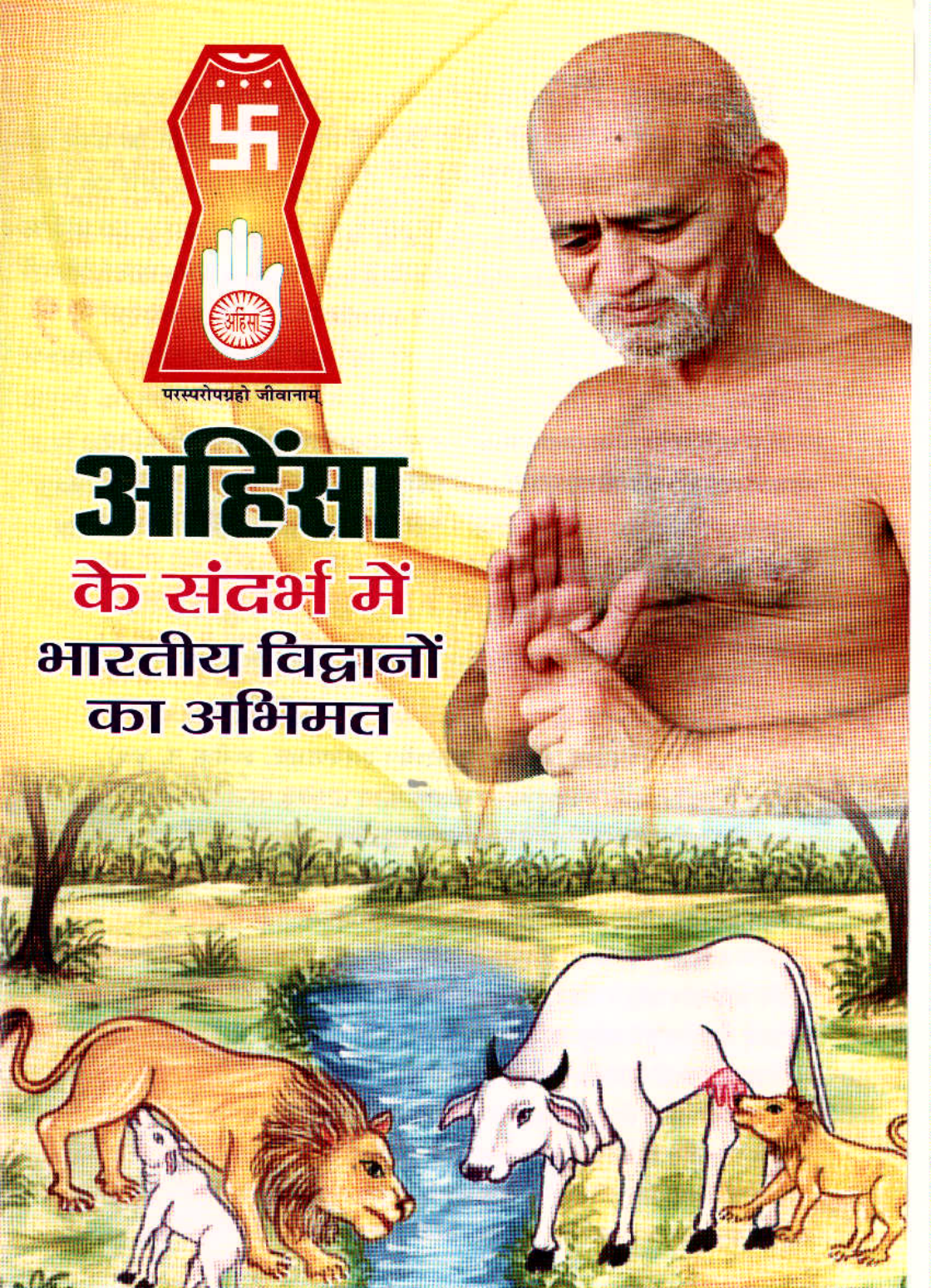

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अहिंसा
के संदर्भ में
भारतीय विद्वानों का अभिमत

"अहिंसा व दया का आपस में गहरा सम्बन्ध है। जब हृदय के कोने से करुणा का झरना बहता है तब हम सामने वाले के प्रति प्रेम, वात्सल्य, दया का भाव प्रकट कर अहिंसा धर्म का पालन कर पाते हैं। जैन धर्म के तीर्थंकर ऋषभदेव से महावीर तक तथा उनके अनुयायियों ने अहिंसा को केन्द्र में मुख्य रखकर धर्म का प्रचार-प्रसार किया है और करते आये हैं।"

प्रसिद्ध देशभक्त ब्राह्मण विद्वान् बाल गंगाधर तिलक ने सन् १९०४ (३० नवम्बर, बड़ौदा, गुजरात) में व्याख्यान में कहा था— (मराठी भाषा में) जैनियों के "अहिंसा परमो धर्मः" इस उदार सिद्धान्त ने सभी पर चिरस्मरणीय छाप छोड़ी है। यज्ञ-यज्ञादिकों में पशुओं का वध होकर जो यज्ञार्थ पशु हिंसा की जाती थी वह आजकल नहीं होती है। पूर्व काल में यज्ञ के लिए असंख्य पशुओं की हिंसा की जाती थी, इसके प्रमाण कालिदास के मेघदूत आदि अनेक ग्रन्थों में मिलते हैं। रन्तिदेव नाम के राजा ने जो यज्ञ किया था उसमें इतना प्रचुर पशुवध हुआ था कि नदी का जल खून से लाल हो गया था। उसी समय से उस नदी का नाम चर्म नदी (चंबल) प्रसिद्ध है। (देखें, मेघदूत, आराध्यैन शरषणभव, श्लोक नं. ४७), पशुवध से स्वर्ग मिलता है। इस विषय में उक्त कथा साक्षी है परन्तु इस घोर हिंसा को ब्राह्मण धर्म से विदाई हो जाने का श्रेय (पुण्य) जैनधर्म के हिस्से में है। ब्राह्मण और हिन्दू धर्म में मांस भक्षण और मदिरापान (शराब) बंद हो गया, सो यह भी जैनधर्म का प्रताप है।

अहिंसा व दया की विशेष प्रीति से लोगों के हृदय हिंसा के दुष्कृत्यों से दुखने लगे और उन्होंने आवेशवश स्पष्ट कह दिया कि जिस वेद में हिंसा की आज्ञा है वह वेद हमें मान्य नहीं है; जो देव हिंसा से प्रसन्न होते हैं, उनकी हमको आवश्यकता नहीं और जिन ग्रन्थों में हिंसा का विधान हो वे हमसे दूर रहें। दया और अहिंसा की ऐसी ही प्रशंसनीय प्रीति ने जैनधर्म को उत्पन्न किया है, स्थिर रखा है और इसी से वह चिरकाल तक स्थिर रहेगा। इस अहिंसा धर्म की छाप जब ब्राह्मण धर्म पर पड़ी और हिन्दुओं को अहिंसा पालन की आवश्यकता हुई तब यज्ञ में पिष्ट पशु का (आटे के पशु का) विधान किया गया।

श्रीयुत पंडित मणिलाल नभूभाई द्विवेदी के शब्दों में—"आश्चर्य की बात है कि आज जो गौ बहुत पवित्र गिनी जाती है, उसका प्राचीन समय में यज्ञ के लिए मारने का रिवाज था। इन कुप्रथाओं को जैनधर्म ने बंद कराया। बुद्ध के धर्म को अहिंसा का आग्रह नहीं था। उसने केवल वेद मार्ग को ही अस्वीकृत किया था, परन्तु जैनधर्म ने महा दयारूप, प्रेमरूप धर्म का प्रचार किया।"

विल्सन कॉलेज, बम्बई के संस्कृत प्रोफेसर श्रीयुत भड़कमकर के अनुसार—"वैदिककाल में यज्ञ-यागादिक कार्य बड़ी क्रूरता से होते थे और यज्ञ में पशुओं का हवन किया जाता था और यह भी पता लगता है कि उस समय इन क्रूर कर्मों की ओर से लोगों को विरक्त करने का भी उद्योग होता था, जिसका फल यह हुआ कि जीवों के प्रतिनिधि स्वरूप दूसरे पदार्थ हवन करके यज्ञ क्रिया सम्पादन करने की चर्चा होने लगी और कुछ काल के अनन्तर तो यह जीव हिंसा एक प्रकार से बंद ही हो गई थी। इस श्रेय का अधिकारी जैनधर्म था। इसके दयामय विचारों का इतना प्रभाव पड़ा था कि उससे वैदिक धर्म को अपना स्वरूप बदलना पड़ा था और उसे अपने में जीवदया को बलात् स्थान देना पड़ा था।"

इन सब कथनों से यह नतीजा निकलता है कि जैनधर्म ही अहिंसा व दया का आद्य प्रवर्तक और मूलनायक है। जैनियों के पूर्वज बड़े दयालु थे। उनका हृदय बड़ा ही विस्तीर्ण और उदार था। दूसरों का हित करना ही वे अपना मुख्य कर्तव्य समझते थे। उनकी दयालुता, उदारता केवल अपने घर, अपने कुटुम्ब और अपनी जाति तक ही संकुचित न थी, बल्कि सारे विश्व के नर-नारियों, जैनों-अजैनों और पशु-पक्षियों तक नि:स्वार्थ भाव से फैली हुई थी। वे महानुभाव यदि किसी प्राणी को मिथ्यात्व दशा व पाप अथवा दु:खावस्था में देखते थे तो तुरन्त उनका हृदय दया से भीग जाता था और जिस तिस प्रकार से उनके दु:ख दूर करने का यत्न करते थे। इसी से उनको सुख-शान्ति की प्राप्ति होती थी। उन्हीं धर्मवीरों और सत्पुरुषों का यह प्रभाव है कि जो भिन्न धर्मावलम्बी (अन्यमती) विद्वान् भी आज जैनियों के दयामय धर्म की छाप अपने ऊपर स्वीकार करते हैं।

हस्त
शिल्प

अहिंसा
जीवन रचना

जैसा देश
वैसा भेष
राष्ट्र समर्पण

पवित्र
मानव जीवन
का मूल
तत्त्व कृषि

गौ सेवा
पशु पालन

शाकाहार

पंचकल्याणक एवं ऐरावत गजरथ के उपलक्ष्य में

ग्रामवासी व सकल जैन समाज तारादेही, जिला-दमोह की अनुपम प्रस्तुति